eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 6, Issue 01, Jan 2023

# एकात्म अर्थनीति : एक तीसरा विकल्प

**[1]समीर कुमार गुप्ता**
[1]सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र, भारतीय महाविद्यालय फर्रुखाबाद उ0प्र0

Received: 20 Jan 2023, Accepted: 28 Jan 2023, Published with Peer Reviewed on line: 31 Jan 2023

## Abstract

वर्तमान समय में आर्थिक समस्याएं अत्यंत जटिल हो चुकी है। इन समस्याओं के समाधान के लिए पश्चिमी विद्वानों ने अनेकों विचार रखे, परंतु ये सभी दृष्टिकोण एकांगी ही रहे। उत्पादन पर अधिक बल देने के कारण पश्चिम में पूँजीवाद का विकास हुआ। पूँजीवाद में यंत्रों के स्वामी ही उत्पादन के स्वामी बन गए। फलस्वरूप लाभ में श्रमिकों का हिंसा कम होता चला गया जिस कारण उनमें प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई और एक नई आर्थिक प्रणाली समाजवाद या साम्यवाद का विकास हुआ। परन्तु पुनः इस प्रणाली में भी वही बुराईयाँ जन्म ले ली जो की पूँजीवादी प्रणाली में विद्यमान थी। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी ने इन दोनों प्रणालियाँ से अलग अपनी एकात्म मानववाद पर आधारित एकात्म अर्थनीति का प्रतिपादन किया जिसमे व्यक्ति के लोकतांत्रिक अधिकारों व उसके स्वस्थ विकास की सम्भावनाएं प्रबल है।

**मुख्य शब्द**:– एकात्म मानववाद, एकात्म अर्थनीति, अर्थायाम, पूँजीवाद, समाजवाद, लोकतांत्रिक अधिकार, व्यक्ति स्वातन्त्रता, प्रतियोगिता, आर्थिक घटक, अनार्थिक घटक।

## Introduction

प्रत्येक अर्थव्यवस्था का मुख्य उद्देश्य अपने नागरिको को समृद्ध एवं सुखी जीवन यापन की सुविधाएं प्रदान करना रहा है। आर्थिक समृद्धि की प्राप्ति के लिए ये अर्थव्यवस्थाएँ जी तोड़कर पीछे पड़ी हुई है। इस व्यवस्था ने कई तरह के अविष्कारों को जन्म दिया है, आर्थिक साधनों के कई स्रोतों का पता लगाया है तथा उत्पादन में कई गुना वृद्धि भी हुई है। आर्थिक समृद्धि की दौड़ में कई अर्थव्यवस्थाएँ तो आगे निकल गई तथा कई काफी पीछे रह गई। परंतु अति समृद्धशाली व अभावग्रस्त दोनों ही अर्थव्यवस्थाएँ अलग तरह की समस्याओं से ग्रस्त है। इन समस्याओं का समाधान करने हेतु पश्चिमी देशों में पूँजीवादी तथा साम्यवादी विचारधाराओं ने जन्म लिया। पूँजीवाद अपने मूल रूप में आज कहीं भी अस्तित्व में नहीं हैं तथा साम्यवाद व समाजवाद अपने कई रूप बदलता हुआ विश्व मानचित्र से लगभग समाप्त हो गया है। एडम स्मिथ, रिकार्डो, मिल, मार्क्स, कीन्स, शुम्पीटर आदि अर्थशास्त्रियों ने विगत वर्षो में कई अर्थशास्त्री सिध्दांत प्रस्तुत किए। विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था पर गुन्नार मिर्डल व जेकब वाइनर आदि अर्थशास्त्रियों ने आर्थिक चिंतन प्रस्तुत किया।

पूँजीवाद चार सिद्धांतों पर खड़ा है,पहला– अस्तित्व के लिए संघर्ष, दूसरा– सर्वोत्तम का अस्तित्व, तीसरा– प्रकृति का शोषण और चौथा– व्यक्तिगत अधिकार। इन चार सिध्दांतों के आधार पर पूँजीवाद का विकास हुआ। पूँजीवाद को अपने विकास में एडम स्मिथ व कीन्स आदि के विचारों का काफी सहयोग प्राप्त हुआ। एडम स्मिथ एक स्थान पर कहते हैं कि "कभी किसी का भला मत करो, भला करना ही है तो तब करो जब ऐसा करने से तुम्हारा कोई स्वार्थ सिद्ध होता है।" कीन्स ने कहा आने

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 6, Issue 01, Jan 2023

वाले कम से कम 100 वर्षों में यदि सच्चाई का कोई उपयोग नहीं है और असत्य ही उपयुक्त हैं तो हमें चाहिए कि सच को झूठ और झूठ को सच मान लें। अधिकाधिक धन प्राप्त करने की भूख, अधिकाधिक लाभ अर्जित करने की स्पर्धा और उसके लिए बरती जाने वाली दक्षता ही आने वाले कुछ समय के लिए हमारे देवता हैं। ये देवता ही हमे आर्थिक आवश्यकताओं की अंधी गली से बाहर निकालकर प्रकाश की ओर ले जाएंगे।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद पश्चिमी जगत के लिए बेकारी व मंदी की समस्या से निपटने के लिए कीन्स का अर्थशास्त्र वरदान सिद्ध हुआ। परन्तु एडम स्मिथ व कीन्स के विचारों ने अस्तित्व के लिए संघर्ष तथा सर्वोत्तम का अस्तित्व जैसे सिद्धांतों के कारण पूँजीवादी देशों में जीवन को काफी प्रतिस्पर्धापूर्ण बना दिया। प्रत्येक व्यक्ति कहीं दूसरे से पिछड़ न जाए इस डर से रात दिन मशीन की तरह काम करने लगा। इस कारण लोगों के जीवन में रक्तचाप, तनाव व हृदयरोग आदि बढ़ गए। लोगों को नींद लेने के लिए नींद की दवा लेनी पड़ती है। जितनी हत्याएं, बलात्कार, तलाक एवं आत्महत्याएं अमेरिका में होती है उतना अपराध अन्य देशों में नहीं पाया जाता। उनकी पारिवारिक संस्था ही समाप्त हो गयी है। उद्योगों के केंद्रीकरण के कारण विशाल महानगर खड़े हो गए तथा उनका जन–जीवन प्रकृति से तो दूर हो ही गया साथ ही नैतिक दृष्टि से भी पिछड़ गया।

उपाध्याय जी पश्चिम के व्यक्तिवाद के लोकतंत्रीय पक्ष के समर्थक है किंतु पूँजीवाद को व्यक्तिवाद की विकृति मानते है। उन्मुक्त आर्थिक प्रतियोगिता पूँजीवाद का आधार है और प्रतियोगिता की स्वतंत्रता को ही पूँजीवादी व्यक्ति की स्वतंत्रता मानते है। परंतु दीनदयाल जी इससे पूरी तौर पर असहमत है। उनके अनुसार यह कहना सही नहीं है कि पूँजीवाद में स्वतंत्र प्रतियोगिता के कारण उपभोग की स्वतंत्रता होती है क्योंकि स्वतंत्र प्रतियोगिता में प्रतियोगियो के समाप्त होने पर एक या कुछ उत्पादकों का उत्पादन पर एकाधिकार हो जाता है जिससे वे उपभोक्ता के लोकतंत्रीय अधिकारों को छीन लेते है और उसके बाद वस्तु का मूल्य मांग और पूर्ति के नियमों से तय न होकर उत्पादकों की अपनी इच्छा और योजना से निर्धारित होते। आर्थिक क्षेत्र में यह एक प्रकार की तानाशाही है जिससे उत्पादक सामान्य जन को उसके अधिकारों से भी वंचित कर देते है। इस प्रकार उपाध्याय जी कुछ व्यक्तियों के हाथों में असीमित उत्पादन क्षमता के केंद्रीकरण के प्रबल विरोधी हैं। एक बड़े कारखाने का मालिक यद्यपि स्वयं उत्पादन की स्वतंत्रता का उपभोग करता है किंतु वह अनेक छोटे उद्योगों को समाप्त कर उनकी स्वतंत्रता का अपहरण भी करता है। इस प्रकार यदि एक व्यक्ति द्वारा उत्पादन की स्वतंत्रता दूसरे के मार्ग में बाधक बनती है तो वह नहीं दी जानी चाहिए।

पूँजीवाद की प्रवृत्ति वित्तीय सत्ता को कुछ हाथों में केंद्रित कर देने की है। अपनी समाजनिरपेक्ष मानसिकता के कारण वह मानव हित के विपरीत कार्य करती है। यह केंद्रीयकरण की प्रवृत्ति पश्चिम के औद्योगिकीकरण को बढ़ाती है, जहाँ पर मशीन मनुष्य का सहयोगी न होकर के प्रतियोगी हो जाती है।

पूँजीवादी व्यवस्था समाज में पृथकता को उत्पन्न करती है। यह समाज के सांस्कृतिक मूल्यों को नष्ट कर उसे उपभोगवाद के दुष्चक्र में फंसा देती है। पूँजीवाद द्वारा प्रस्तुत उपभोगवाद व आर्थिक मानव की कल्पनाओं ने मानव के आर्थिक जीवन को विभक्त कर दिया और श्रम व आनंद के बीच एक गहरी खाई उत्पन्न कर दी है। मशीन को मनुष्य का सहयोगी बनाने की बजाय उसका मालिक

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 6, Issue 01, Jan 2023

बना दिया है। उत्पादन कार्य में से शिल्प व सृजन के सुख को नष्ट कर दिया है। व्यक्तिवाद की ही भाँति समाजवाद का भी विचार यूरोपियन देन हैं। समाजवाद का प्रतिनिधि अंततोगत्वा सर्वहारा की तानाशाही वाला साम्यवाद ही बनता है, जो अलोकतांत्रिक राज्यवाद एवं वर्गवाद के साथ ही पूँजीवाद के समान औद्योगीकरण व केंद्रीकरण का समर्थक है। दीनदयाल जी समाजवादी वृत्ति के तो प्रशंसक है लेकिन उसके राज्यवाद व केंद्रीयकरणं के व्यवहारिक उपाय के खिलाफ़ भी है। समाजवाद व्यक्तिवाद के अतिवाद का विरोध करता है। वह व्यक्ति के बजाय व्यवस्था में परिवर्तन का समर्थक है तथा व्यक्ति को अव्यवस्था का ही उपज मानता है। उसका यह व्यवस्थावाद ही उसे अंततः राज्यवादी बना देता है। उपाध्याय जी व्यक्ति बनाम व्यवस्था के विवाद को भी गलत मानते है। उनके मत में कोई व्यवस्था व्यक्ति निरपेक्ष नहीं होती तथा कोई व्यक्ति व्यवस्था निरपेक्ष नहीं हो सकता। वे इस प्रकार की समाज व्यवस्था के पोषक है जो अपने मनुष्य की चिंता करता है।

उपाध्याय जी के मत में बुराई का वास्तविक कारण व्यवस्था नहीं अपितु मनुष्य है। बुरा व्यक्ति अच्छी से अच्छी व्यवस्था को बिगाड़ सकता है। समाज की प्रत्येक परम्परा और व्यवस्था किसी न किसी अच्छे व्यक्ति द्वारा प्रारंभ की गई होती है परंतु उसी अच्छी परंपरा को जब एक बुरा व्यक्ति संचालित करता है तो उसमें बुराई आ ही जाती है। अतः हमारा ध्यान व्यक्ति की कर्तव्य भावना को जगाने पर केन्द्रित होना चाहिए।

समाजवाद की केंद्रीकरण की प्रवृत्ति मनुष्य के कर्तव्य भाव को समाप्त कर देती है। उसमें मजदूर का भाव जगाती है। इसमें कर्ता को सम्मान एवं कर्तव्य का सुख नहीं रहता। दीनदयाल जी के अनुसार समाजवाद में केंद्रीकरणवादी पूँजीवाद के सभी दोष तो होते ही है साथ ही राज्यवादी नौकरशाही का एक अतिरिक्त दोष भी जुड़ जाता है। इस कारण वे पूँजीवाद के साथ ही साथ समाजवाद की भी आलोचना करते हैं। वास्तव में साम्यवाद व पूँजीवाद दोनों में स्वामित्व के स्वरूप का अंतर छोड़कर अन्य कोई अंतर नहीं है। अतः दोनों में ही व्यक्ति के विकास के अवसर नहीं है। दोनों ही प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष अपनी केंद्रीय सत्ता की सुरक्षा के लिए राज्य पर अपना अधिकार पाना चाहते हैं। पूँजीवादी व्यवस्था पहले आर्थिक क्षेत्र पर अधिकार जमाकर फिर अप्रत्यक्ष रूप से राज्य पर अधिकार करती हैं जबकि समाजवादी व्यवस्था प्रत्यक्ष रूप से राज्य को ही संपूर्ण उत्पादन का स्वामी बना देती है। इस प्रकार दोनों ही व्यवस्थाएँ व्यक्ति के लोकतंत्रीय अधिकारों एवं उसके स्वस्थ विकास के प्रतिकूल है।

दीनदयाल जी के मत में केंद्रीकरण की प्रवृत्ति अमानवीय है। मनुष्य की सांस्कृतिक चेतना व्यक्ति–व्यक्ति में, व्यक्ति और समाज में, प्रकृति और व्यक्ति में, तथा कर्ता और कृति में परस्पर 'आत्मीयता' का संचार करती है। ये दोनों व्यवस्थाएँ इस 'आत्मीयता' के संचार को नष्ट कर संबंधों में एक यांत्रिकता उत्पन्न कर देती है। केंद्रीय व्यवस्था में मानव की विविधताओँ और विशेषताओ के लिए कोई स्थान नहीं रहता, जिस कारण वे उसे ऊंचा उठाने के स्थान पर मात्र यन्त्र का एक पुर्जा बना देती है इससे उसका अपना व्यक्तित्व मर जाता है। केंद्रीकृत औद्योगीकरण में श्रद्धा रखने वाली पूँजीवादी व समाजवादी व्यवस्थों को दीनदयाल जी मानव विरोधी मानते हैं। अतः वे समग्र मानववाद के आधार पर आर्थिक लोकतंत्र व विकेंद्रित अर्थनीति का निरूपण करते हैं। उनके अनुसार पूँजीवाद व समाजवाद दोनों ही लोकतंत्र का व्यवहारतः निषेध करते हैं। पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के दुष्परिणामों

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 6, Issue 01, Jan 2023

की प्रक्रिया में ही मार्क्सवादी अर्थचिंतन सामने आया। 1917 ई. में जब रूस की क्रांति हुई तो मार्क्सवाद के बारे में यह कहा गया कि यह एक अत्यंत वैज्ञानिक विचारधारा है जिसके सामने सभी विचारधाराएं समाप्त हो जाएगी तथा ऐसे समाज का निर्माण होगा जो समता युक्त तथा सभी प्रकार के शोषण से भी मुक्त होगा। परन्तु मुश्किल से 70 वर्ष बाद ही साम्यवाद का यह महल ढहने लगा तथा आज विश्व मानचित्र से लगभग समाप्त हो गया। लंबे चौड़ वायदे करने वाली साम्यवादी अर्थव्यवस्थाएँ लोगों को न्यूनतम रोटी कपड़ा भी उपलब्ध नहीं करवा पाई।

भारत में राजनीतिक स्वतंत्रता के इतने वर्षों बाद भी लोगों की स्थिति काफी दयनीय है। गरीबी, बेकारी, असमानता, मुद्रास्फीति व भुगतान संतुलन आदि कई समस्याए ज्यों की त्यों खड़ी है। पंडित दीनदयाल जी पूछते है कि विश्व आज भीषण सुभ्रम के चौराहे पर खड़ा है क्या इस चक्रव्यूह से उसे छुड़ा सकने वाला कोई तीसरा विकल्प है? दीनदयाल जी ने बड़े ही आत्मविश्वासपूर्वक कहा है कि भारतीय संस्कृति के एकात्म मानव दर्शन के अंतर्गत एकात्म अर्थनीति ही ऐसा तीसरा विकल्प बन सकता। पंडित दीनदयाल जी के अनुसार एकात्म मानव दर्शन एक ऐसा जीवन दर्शन है जो मनुष्य का विचार केवल आर्थिक मानव के एकांगी दृष्टिकोण से न करते हुए जीवन के समग्र पहलुओं का तथा ऐसे मानव के अन्य मानवों एवं मानवेतर सृष्टि के साथ परस्पर पूरक एकात्म संबंधों को भी ध्यान में रखकर समृद्ध सुखी एवं कृतार्थ जीवन की दिशा दर्शाता है।

अर्थनीति का विचार करते समय आर्थिक बातों के साथ ही कुछ अनार्थिक बातों का भी विचार करना पड़ता है। किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि अधिकांश पश्चिमी अर्थशास्त्रियों ने इन आर्थिकेत्तर बातों पर कोई विचार नहीं किया। कुछ अर्थशास्त्रियों जैसे जे.एस.मिल के अनुसार "यह नहीं कहा जा सकता की सभी आर्थिक प्रश्नों का केवल अर्थशास्त्र के आधार पर ही समाधान ढूंढा जा सकता है। अनेक आर्थिक प्रश्न ऐसे होते हैं जिनके महत्वपूर्ण राजनीतिक व नैतिक पक्ष भी होते हैं जिनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।"

प्रोफेसर जैकब वाइनर का भी इसी प्रकार का मत है कि "केवल अधिक पूंजी, अधिक भूमि व कोयले की अधिक खाने आदि बातों के आधार पर आर्थिक प्रगति नहीं की जा सकती। अच्छी शिक्षा, संस्कार, राजनीतिक एवं सामाजिक संगठन एवं श्रम की प्रतिष्ठा को संजोए रखना भी उसके लिए आवश्यक होता है।" प्रोफेसर गुन्नार मिर्डल ने भी इसी तरह के विचार प्रकट किये उनके अनुसार "अर्थशास्त्रियों द्वारा निरूपित उत्पादन के घटकों के गुण धर्मों के साथ आर्थिकेत्तर घटकों का पर्याप्त संबंध रहता है। इसलिए आर्थिक घटकों के साथ आर्थिकेत्तर घटकों का भी विचार करने वाला अर्थशास्त्र का हमें विकसित करना होगा।" परन्तु आज पश्चिमी अर्थशास्त्र, विज्ञान का अधिकाधिक विचार कर मानव की केवल भौतिक समृद्धि बढ़ाने की दिशा में ही सोचता हैं तथा आज उसे भौतिक समृद्धि के साथ मानसिक स्वास्थ्य व संतोष प्राप्त करा देने वाली संजीवनी की उसे तलाश है। दीनदयाल जी द्वारा प्रस्तुत एकात्म मानव दर्शन और उसके अंतर्गत एकात्म अर्थनीति मे इस संजीवनी का अनुभव किया जा सकता है।

पंडित जी ने अपनी पुस्तक 'एकात्म मानववाद' मे मानव जीवन व संपूर्ण प्रकृति के एकात्म संबंध को बताते है जो मानव और प्रकृति की विविधता मे आंतरिक एकता के विभिन्न रूपों को अभिव्यक्त करती है। इन सब में पारस्परिक अनुकूलता और पूरकता होती है जो मानव मूल्यों पर

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 6, Issue 01, Jan 2023

आधारित होती है। एकात्म मानवदर्शन में पंडित दीन दयाल उपाध्याय ने मानव जीवन के सभी अंगों को ध्यान में रखते हुए विचार किया है, जिसमे मनुष्य शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा का संकलित रूप है और इसीलिए मनुष्य के सर्वांगीण विकास इसी संकलित रूप में मानवता के आधार पर ही संभव है। इस विकास में भौतिक प्रगति के साथ नैतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति भी अभिप्रेत है क्योंकि यह मानवता पर आधारित है। मानवता को आधार बनाकर सुयोग्य समाज निर्मित हो सकेगा और मानव अपने समान हित पर विचार करते हुए जीवन के सभी अंगों व व्यवस्थाओं को मानवता आधारित स्थापित कर सकेगा। पंडित दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद पर आधारित विचारों के आधार पर राष्ट्रीयता, मानवता व विश्वशान्ति जैसे श्रेष्ठ आदर्शों के अंतर्विरोधों को दूर किया जा सकेगा और मानव पूर्ण सुखी जीवन प्राप्त कर विकास की ओर अग्रसर हो सकेगा।

एकात्म अर्थनीति की अवधारणा प्रत्येक व्यक्ति के आर्थिक और साथ ही आध्यात्मिक विकास की बात करती है। वह इस बात ज़ोर देते हैं कि आध्यात्मिक विकास के बिना कोई भी आर्थिक विकास संभव नहीं है और ना ही आर्थिक विकास के बिना आध्यात्मिक विकास संभव है। उनका मूल विश्वास था कि विकास के इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को यह सुनिश्चित करना चाहिए की उत्पादन, वितरण, उपभोग इत्यादि सुव्यवस्थित ढंग से हो।एक सुव्यवस्थित समाज होना चाहिए तथा व्यवस्था का विकास इस प्रकार होना चाहिए कि सभी का सर्वांगीण विकास हो। दीनदयाल जी को ऐसी कोई व्यवस्था स्वीकार्य नहीं है जिसमें कुछ लोगों की तो प्रगति हो पर कुछ लोग पीछे रह जाए।

मनुष्य के सर्वांगीण विकास की कल्पना के लिए दीन दयाल उपाध्याय ने 'एकात्म मानववाद' पर आधारित 'एकात्म अर्थनीति' का प्रतिपादन किया। 'एकात्म अर्थनीति' का तात्पर्य ऐसी अर्थनीति से है जो एकांकी आर्थिक दृष्टिकोण तक सीमित न रहकर मानव एवं मानवेतर दृष्टि से पारस्परिक एकात्म संबंधों तक जीवन को सम एवं सुखी बनाने के समग्र पहलुओं का दिशा निर्देशन करती है। पंडित जी का आर्थिक चिंतन एकात्म मानववाद से निष्पादित है, जिसमें व्यक्ति एकांकी नहीं है बल्कि संपूर्ण की एक इकाई है। उनके अनुसार व्यक्ति मन, बुद्धि, आत्मा एवं शरीर का एक समुच्चय है। अतः मानव के संदर्भ में इन चारों को विभाजित करके नहीं देखा जा सकता।

आर्थिक दृष्टि से दीनदयाल जी तीन बातों को महत्वपूर्ण मानते थे– प्रथम, उत्पादन को बढ़ाना, द्वितीय, समान वितरण करना तथा तृतीय, संयमित उपभोग। इन तीनों को मिलाकर उन्होंने एक नाम दिया 'अर्थायाम'। इन तीनों में संतुलन स्थापित करने में राज्य का दायित्व क्या हो या नहीं हो, ऐसा कहना उचित नहीं है। उनका मानना था कि आर्थिक क्षेत्र में सामान्य नियोजन, निर्देशन, नियमन और नियंत्रण का दायित्व राज्य सरकार पर होना चाहिए। पंडित दीनदयाल उपाध्याय की एकात्म अर्थ नीति मूलतः राष्ट्र की एकता, सुरक्षा, प्रत्येक व्यक्ति को न्यूनतम जीवन स्तर का आश्वासन, व्यक्ति को आजीविका के अवसर उपलब्ध कराने की आवश्यकता, उत्पादन साधनों के अनुसार औद्योगिकी के विकास की आवश्यकता, तथा प्राकृतिक साधनों का मानवीय दृष्टि और आवश्यकतानुसार दोहन, निरपेक्ष और सापेक्ष रूप से अभिव्यक्त है। इस दृष्टि से वह व्यक्ति और राष्ट्र को सशक्त देखना चाहते हैं। इन दोनों के मूल में म पिछलाानव को केंद्र मानते हुए समस्त मानव जाति के कल्याण की दृष्टि दीनदयाल जी के चिंतन में दिखाई पड़ती है।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 6, Issue 01, Jan 2023

## संदर्भ ग्रंथ–


- महेश चंद शर्मा,(2016) दीनदयाल उपाध्याय, संपूर्ण वांग्मय खंड पांच, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
- दत्तोपंत ठेंगड़ी,(1970) एकात्म मानव दर्शन– एक अध्ययन, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ
- दीन दयाल उपाध्याय,(1958) भारतीय अर्थनीति विकास की एक दिशा, राष्ट्रधर्म पुस्तक प्रकाशन, लखनऊ
- दीन दयाल उपाध्याय,(25 जनवरी 1954) भारतीय जनसंघ की अर्थनीति, पंचजन्य जनसंघ अधिवेशनांक
- दीन दयाल उपाध्याय,(1960) राष्ट्र जीवन की समस्याएं, राष्ट्र धर्म प्रकाशन लिमिटेड मॉडल हाउसेस लखनऊ
- भालचंद कृष्णा जी केलकर,(2016) पंडित दीनदयाल उपाध्याय विचार दर्शन, सरूचि प्रकाशन दिल्ली